IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

स्वतंत्रता पूर्व स्वातंत्र्योत्तर काल में महिला आन्दोलन: एक विश्लेषण

रश्मि गुप्ता

(असिस्टेंट प्राफेसर, राजनीति विज्ञान),

एस. एन. सेन. बा. वि. पी.जी. कॉलेज, कानपुर

परम्परागत समाज से लेकर वर्तमान समाज तक नारी के सम्मान और प्रतिष्ठा और उसके वास्तविक महत्व की प्रतिष्ठा की स्थापना अभी भी एक ज्वलंत प्रश्न की भाँति विद्यमान है। भारतीय समाज भी इस ज्वलंत प्रश्न के दायरे में आकर स्त्रियों की प्रतिष्ठा व सम्मान के द्वंद में झूल रहा है। वैदिक काल में नारियों को सम्मानजनक व बराबरी का अधिकार प्राप्त था परन्तु समयान्तराल के साथ स्थितियों में अंतर आता गया और वर्तमान में भी नारी अपनी अस्तित्व, अस्मिता व शुचिता के प्रश्नों से जूझ रही हैं। स्वतंत्रतापूर्व अनेक ऐसे कारण विद्यमान थे जिन्होंने निरन्तर नारी को अवनति की ओर धकेला। सर्वप्रमुख कारण जिसने नारी को अपनी सशक्त स्थिति से पीछे होने पर विवश किया वह था देश पर विदेशी आक्रान्ताओं के प्रहार व शासन की एक लम्बी श्रृंखला। विदेशी शासकों से भय ने भारतीय नारी को एक रूढ़िगत कुप्रथाओं के जाल से ढक दिया जिसमें सर्वप्रथम था बाल विवाह। विवाह के बाल्यावस्था में होने से नारियों की जहाँ शिक्षा के अवसर से वंचित कर दिया वहीं पारिवारिक जिम्मेदारियों ने अपने प्रति जागरुक होने का अवसर भी विलुप्त कर दिया। पर्दाप्रथा ने स्त्रियों को पराधीन बनाकर पुरुष प्रधान समाज की स्थापना की जिसके अन्तर्गत स्त्री अपने बाल्यकाल में पिता पर, युवावस्था में पति पर तथा वृद्धावस्था में बेटे के ऊपर निर्भर हो गयी। स्वतंत्र अस्तित्व या समाज में पहचान उसके लिये स्वप्न बन गयी। शिक्षा से वंचित इस आधी आबादी पारिवारिक दायित्व को ही अपना भाग्य निर्धारक स्वीकार कर लिया एवं पितृ सत्तात्मक समाज, भारतीय समाज की संस्कृति का सूचक बना। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान आश्चर्यजनक परिवर्तन परिलक्षित हुआ हालांकि इसकी पृष्ठभूमि 19वीं शताब्दी में बननी शुरु हो गयी थी जब सामाजिक सुधार आन्दोलनों के माध्यम से स्त्रियों के उद्धार के प्रयास आरम्भ हुए इन सामाजिक आन्दोलनों में सर्वप्रथम प्रयास था राजा राम मोहन राय द्वारा ब्रह्म समाज की स्थापना व सती प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन जिसके परिणामस्वरुप 1829 में सती प्रथा विरोध अधिनियम इसी क्रम में आर्य समाज एवं महात्मा ज्योतिबा फुले के प्रयास सराहनीय हैं क्योंकि इससे महिलाओं की शिक्षा व उनके सशक्तिकरण के प्रयास आरम्भ हुए। राष्ट्रीय आन्दोलन के विभिन्न चरणों में महिलाओं ने भारी संख्या में भाग लिया, अपनी आशाओं और आकांक्षाओं के साथ संख्यात्मक दृष्टि से तो उसे मजबूत बनाया ही, वे आन्दोलन में अपने मुद्दे और मसौदे भी साथ लेकर आई। महिलाओं को पहली बार घर से बाहर किसी गतिविधि में भाग लेने का मौका मिला। महिलाओं के राजनीतिकरण की यह प्रक्रिया इतने निर्बाध व सहज ढंग से हुई कि पुरुष संरक्षको की ओर से किसी रुकावट की बजाए उनकी

सराहना ही मिला। प्रश्न यह उठता है कि महिलाओं को राजनीति में आने की स्वीकृति आसानी से कैसे मिली जबकि उन्हें किसी भी सार्वजनिक या राजनीतिक गतिविधि में भाग लेने की अनुमति नहीं थी। इसका मुख्य कारण यह था कि राष्ट्रीय आन्दोलन को एक धार्मिक मिशन के रुप में देखा गया, स्वाधीनता संग्राम को देशपूजा माना गया। सन् 1920 ई. में जब असहयोग आन्दोलन शुरु हुआ तो पहली बार महिलायें भारी संख्या में आंदोलन से जुड़ीं। सैकेड़ों महिलायें खादी व चरखा बेचने गली-गली गई, उन्होंने खादी को लोकप्रिय बनाने के लिये जुलूस निकाले और समूहों में विदेशी कपड़ों की होली जलाई। 1921 में कांग्रेस सम्मेलन में 144 महिला प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इससे 131 महिला स्वैच्छिक कार्यकर्ता थी और 14 महिलायें विभिन्न समितियों में थी। मुम्बई में महिलाओं ने राष्ट्रीय स्त्री सभा का गठन किया और पूरी तरह से राष्ट्रीय एक्टीविज्म के प्रति समर्पित था। यह पहला महिला संगठन था जो बिना पुरुषों की मदद के चलाया जाता था। इसके दो उद्देश्य थे स्वराज्य और महिलाओं का उद्धार एवं उत्थान।[1] महिलाओं के राजनीति में प्रवेश एवं स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भागीदारी के संदर्भ में महात्मा गाँधी की भूमिका उल्लेखनीय है। गाँधी जी का मानना था कि महिलाओं को वीरांगनाओं की तरह आन्दोलन में हिस्सा लेना चाहिए। जहाँ एक ओर महिलाओं को सक्रिय राजनीति में प्रवेश का अवसर मिला वहीं गाँधी जी महिलाओ के बराबरी का तात्पर्य इस संदर्भ में लिया कि महिलाओं को गृहपोषक की भूमिका निभानी चाहिए। अपनी क्षमतानुसार राष्ट्र निर्माण में योगदान देना चाहिए जो देश की उन्नति में सहायक हो। मधु किश्वर लिखती है कि जबकि कई रुप में गाँधी जी के स्त्रियों संबंधी विचार और समाज में उनकी भूमिका 19वीं शताब्दी के समाज सुधारकों से बहुत अधिक भिन्न नहीं रही हैंए तथापि कुछ अन्य महत्वपूर्ण रुप में वे परम्परा से हटकर दूसरा रास्ता अपनाते हैं। सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंतर यह है कि गाँधी जी स्त्रियों को सुधार की वस्तु के रुप में नहीं देखते, वे इन्हें ऐसे असहाय प्राणी नहीं मानते जिनके लिए दया की जरुरत हो। इसके स्थान पर वे स्त्रियों को सामाजिक परिवर्तन का काफी सक्रिय, आत्मचेतन प्रतिनिधि मानते है। सामाजिक जीवन मे स्त्रियों के सम्मान को स्थापित करने में सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में उनके द्वारा भाग लेने के प्रति कुछ पूर्वाग्रहों को तोड़ने में उनकी समस्याओं के प्रति सहानुभूतिपरक चेतना के वातावरण को बनाने में गाँधी जी के कार्यकलाप, उनके स्वयं के विचारों एवं समाज में स्त्रियों की भूमिका और स्थान के बारे में उनकी घोषणाओं से भी परे जाना है।[2] आन्दोलन की एक नई श्रृंखला सविनय आन्दोलन में महिलाओं की सहभागिता एक नये स्वरुप में उभरी। महिलायें इस आन्दोलन में अग्रणी भूमिका निभाने के लिए तत्पर थीं परन्तु गांधी जी द्वारा अंग्रेजों की भ्रान्तियों का खण्डन करने हेतु पुरुषों को डाण्डी मार्च में रखा गया तथा डाण्डी मार्च के पश्चात् महिलाओं का सम्मेलन बुलाकर आगे के कार्यक्रमों में उनकी सहभागिता के स्वरुप को निर्धारित करने हेतु रुपरेखा बनाई गयी तथा डाण्डी आंदोलन के प्रसार के साथ-साथ महिलाओं की भूमिकाओं में प्रसार हुआ तथा हर वर्ग की महिला स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़ीं। सविनय अवज्ञा आंदोलन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा कर और राजस्व का बहिष्कार था। सरकार ने इसकी प्रतिक्रिया में घरों के सामान उपकरण और कई बार जमीन तक जब्त करना शुरु कर दिया, जिसकी बाद में नीलामी की जाती। इन नीलामियों के बहिष्कार में महिलायें काफी सक्रिय थीं। सामान खरीदने वालों को बाद में पछताना पड़ता था क्योंकि उन्हें सामान उनके पूर्व मालिकों को वापस देने के लिए बाध्य होना पड़ता था। कई बार महिला सत्याग्रही सामान खरीदने वालों के घरों में भूख हड़ताल पर बैठी रहती। कई बार महिलाओं को महीने-महीने तक धरना देना पड़ता था पर आमतौर से एकद-दो दिन में उनकी शर्मा हुजूरी में सामान लौटा दिया जाता था। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान गाँधी जी द्वारा अपनाई गई अहिंसा और सत्याग्रह की अवधारणा ने महिलाओं को देश के लिए आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया वहीं एक धारणा यह भी थी कि महिलाओं को शारीरिक दमन का सामना नहीं करना पड़ेगा परन्तु अंग्रेजी साम्राज्यवादी शासन ने इस धारणा को तोड़ दिया और महिलाओं को पुलिस द्वारा दमन का सामना करना पड़ा। महिलाओं के प्रति बर्बर व असभ्य व्यवहार व लाठीचार्ज की घटनाओं ने

जनाक्रोश को बढ़ाया और स्वतंत्रता आन्दोलन को देश में हर स्तर पर व हर भाग में वृद्धि करने में मदद दी। 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में हजारों की संख्या में महिलाओं ने भाग लिया। हजारों महिलायें भूमिगत हुई, समानान्तर सरकार बनाने में सहायक बनी, कई गैरकानूनी कामों में भागीदार बनी। इस दौरान कईयों की हत्या की गयी। बड़े पैमाने पर महिलाओं को आत्मरक्षा संबंधी प्रशिक्षण दिया गया। पटना में महिलाओं ने प्रभात फेरियां निकाली और पोस्टर प्रदर्शनियां की। सन् 1940 के दशक में देश के स्वाधीन होने के आसार दिखने लगे थे और महिला आन्दोलन पूरी तरह से स्वाधीनता आन्दोलन में समाहित हो गया था। यह सब इतनी सहजता से हुआ कि सबको लगा कि शायद महिलाओं की मुक्ति संबंधी सभी मुद्दों का हल देश की स्वतंत्रता है। यह बात काफी गहराई से महसूस की जा रही थी कि स्वतंत्रता प्राप्ति से महिला और पुरुमों के बीच की गैर बराबरी भी दूर हो जायेगी।[4] 1947 में देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् आजादी का सूरज सभी के लिए उम्मीदों की किरण लेकर आया। देश की महिलाओं ने भी पुरुषों के समान सक्रिय राजनीतिक व सामाजिक सक्रियता का स्वप्न देखा तथा संवैधानिक प्रावधानों के तहत स्त्री सशक्तिकरण को अमली जामा पहुँचाने हेतु विभिन्न कानूनों को बनाया गया। इन कानूनों के निर्माण का एकमात्र उद्देश्य था स्त्रियों को सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्र में आगे बढ़ने के प्रोत्साहन देना। डॉ. अम्बेडकर ने प्रथम विधि मंत्री के तौर पर भारतीय संसद में दिनांक 5 फरवरी, 1951 को हिन्दू कोड बिल प्रस्तुत किया। इस बिल को प्रस्तुत करने का एकमात्र उद्देश्य था स्त्रियों को उनका गौरवपूर्ण स्थान दिलनाने हेतु वैधानिक प्रावधान सुनिश्चित कर समान अधिकार दिलाना था। हिन्दू कोड बिल के विषयों में जीवन साथी के चुनाव, अल्पायु में विवाह, विवाह विच्छेद, विधवा विवाह विरोध एव दहेज आदि विषयों पर कानून पारित कर इनसे संबंधित उनकी निर्योग्यताओं को दूर कर महिलाओं को आवश्यक स्वतंत्रता व सुरक्षा प्रदान की गई। मूल अधिकारों के संवैधनिक प्रावधान के अन्तर्गत जहाँ अनुच्छेद 15 के प्रावधान में लिंग आधारित भेदभाव समाप्त किया गया। अनुच्छेद 16 के खण्ड 2 के तहत लोक नियोजन में पुरुष के साथ समानता प्रदान की गई। भारत में एक न्यायपूर्ण समाज की रचना के लिए इसके प्रमुख घटक हिन्दू समाज की पुर्नरचना बहुत जरुरी थी। इस संदर्भ में हिन्दू कोड बिल का निर्माण कर डॉ. अम्बेडकर ने महत्वपूर्ण योगदान दिया क्योंकि स्वतंत्रता के पश्चात् आजादी के नये स्वरुप को रेखांकित किया जाना आवश्यक था जिसमें सभी वर्गो को उनके अधिकारों के साथ उनकी सहभागिता में भी वृद्धि आवश्यक थी। परम्परागत दासता से मुक्ति के लिये स्त्रियों क सशक्तीकरण में हिन्दू कोड बिल के प्रावधान मील के पत्थर साबित हुए सवैधानिक प्रावधानो की उपर्युक्त व्यवस्था के बाद यह विचारणीय तथ्य है कि क्या स्त्रियों की स्थिति में सुधार आया या जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उनकी सहभागिता बढ़ी या सार्वजनिक सम्पत्ति में उनकी हिस्सेदारी बढ़ी, भारत में स्वातंत्रतोत्तर काल के जन आंदोलनों में स्त्रियों की सहभागिता संबंधी एक महत्वपूर्ण संकलन का इलिना सेन ने संपादन किया व कहती है- जन आन्दोलनों की समीक्षा कर रहे है, वे बड़े आन्दोलन है, जिनका उद्देश्य वृहद राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन लाना है और जिनमें स्त्रियों की महत्वपूर्ण सहभागिता रही है। यह सही है कि स्त्रियों की सहभागिता का तथ्य इन्हें अनिवार्यता महिलाओं के आन्दोलन नहीं बना देता, अर्थात् कोई भी आंदोलन जिसमें स्त्रियों की काफी संख्या हो और विस्तृत क्षेत्र में फैला हो, अपने आप महिला आंदोलन नहीं बन जाता। वास्तव में यदि हम शुद्ध नारीवाद के माप का प्रयोग करते हुए इन आंदोलनों की समीक्षा करें अर्थात जिसे जनसमुदाय 'संकीर्ण अथवा एक आयामी' स्त्रियों के मुद्दे कहता है, हम बधुआ निराश होंगे। इन आंदोलनों में स्त्रियाँ केवल स्त्रियों की विशिष्ट मांगों को लेकर स्वायत्तता अथवा स्वतंत्र अभिव्यक्ति के लिये प्रयास नहीं करती है। मांगों और मुद्दों की अभिव्यक्ति उनके आन्दोलनों पर यह दबाव बनाती है कि स्त्रियों के वृहद आधार के बारे में संज्ञान लिया जाये।[5] स्त्रियों के आन्दोलन को दो वर्गो में विभाजित किया जा सकता है- प्रथम वर्गीकरण के अन्तर्गत वे आन्दोलन शामिल किये जा सकते हैं जो संपूर्ण समाज से संबंधित आन्दोलन, द्वितीय वर्ग में वे आन्दोलन जो स्त्रियों से संबंधित थे। स्वतंत्रता प्राप्ति

के साथ ही एक आन्दोलन उभरा जिसे हम तेभागा आन्दोलन के नाम से जानते है। तेभागा आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी ने महिलाओं के आंदोलन के आधार को बढ़ा दिया। तेभागा आन्देालन बंगाल में महान युद्ध के किसान आन्दोलनों में एक था। बंगाल की महिलाओं ने इस आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कई शिक्षित महिलायें पूरे देश में उभर रहे विभिन्न किसान विद्रोहों में भाग ले रही थी। आन्दोलन की अनूठी विशेषताओं में पुरुषों के बराबर महिलाओं की बड़ी भागीदारी थी। भूमिहीन और गरीब किसान महिलाओं ने नारी वाहिनी नामक लड़ाकू सैनिक दस्ते का गठन किया। कम्युनिस्ट महिला कार्यकर्ताओं ने ग्रामीण महिलाओं को खास तौर पर महिलाओं के सवालों पर संगठित किया जैसे वित और सम्पत्ति के अधिकार, ग्राम स्तरीय महिला आत्मरक्षा समितियां संगठित की गई जिन्होंने घरेलू हिंसा और पत्नियों की पिटाई जैसे सवालों को उठाया। इस वक्त का एक और महत्वपूर्ण कम्युनिस्ट किसान आन्दोलन था, जो 1946-50 में चला था। इसमें भी महिलाओं की हिस्सेदारी काफी महत्वपूर्ण थी और इसके नेतृत्व ने भी पत्नियों की पिटाई जैसी महिलाओं की समस्याओं पर ध्यान दिया लेकिन उनके बीच से महिला संगठनों के उभरने को कोई सबूत नहीं है। यह भी कहा गया कि महिलाओं को छापेमार दस्ते में शामिल होने से रोकने की कोशिशें भी की गयीं। जब वे शामिल होने में सफल हुई तो उन्हें पूरी तरह से स्वीकार नहीं किया गया। दूसरे क्षेत्रों की कम्युनिस्ट महिलाओं ने भी बाद में शिकायत की कि उन पर काषरेडों से शादी कर लेने पर जोर दिया गया। उन्हें अपनी क्षमता पर आधारित होकर नेतृत्व का हिस्सा बनने के बजाए महिला मोर्चे पर काम करने की ओर धकेला गया।[6] किसान सभा के आन्दोलन में स्त्रियों को उसी प्रकार और समान मात्रा में सहभागी नहीं बनाया गया जितना कि इनके प्रतिपक्ष पुरुषों को, यहाँ तक की आन्दोलन के तीव्र स्तर पर भी नहीं बनाया गया। स्त्रियों के लड़ाकूपन, प्रतिबद्धता और प्रवीणता की विशेषताओं जिनके भरपूर साक्ष्य उपलèध है, को न तो महत्व दिया गया और न ही उन्हें विकसित किया अधिकाधिक उन्हें केवल एक सहयोगी की भूमिका दी गयी।[7] स्त्रियों ने विभिन्न कृषक आन्दोलनों में सक्रिय एवं उग्र भूमिका निभाई परन्तु नेतृत्व के स्तर पर उनकी अवहेलना हुई फिर वह चाहे केरल का नारियल जटा के मजदूरों का आन्दोलन हो या अलैप्पी में वर्ग संघर्ष या बोधगया में आन्दोलन। तेमागा आन्दोलन का संचालन 1940 के दशक में किसान सभा और भारत के साम्यवादी दल ;सी0पी0आई0 ने किया जबकि बोधगया आन्दोलन ;1970 के दशक में नेतृत्व गाँधीवादियों द्वारा किया गया। आज भी, विभिन्न मात्रा में नेतृत्व के सभी स्तरो पर स्त्रियों की वास्तविक भागीदारी देखने कों नहीं मिलती। संगठन और लामबंदी के प्रारम्भिक स्तरों के दौरान स्त्रियों को सक्रिय रुप में सहायता लेने का प्रयास किया जाता है और ली भी जाती है। फिर भी निर्णय-प्रक्रिया और नेतृत्व के महत्वपूर्ण स्तरों पर उन्हें सम्मिलित नहीं किया जाता है। जब अधीनस्थ की अन्य विशेषताओं जैसे निम्न जाति प्रस्थिति के साथ इन्हें जोड़ दिया जाता है तब भागीदारी के संबंध में उनकी स्थिति और भी खराब हो जाती हैए यद्यपि ग्रामीण मजदूरों के सतत् आन्दोलनों में उनकी सक्रिय भूमिका रही है।[8] चिपको आन्दोलन के दौरान महिलाओं की सक्रियता का विश्लेषण पारिस्थितिकीय नारीवाद परिप्रेक्ष्य से किया गया। आन्दोलन को चिपको नाम इसलिए दिया गया क्योंकि लकड़ी के ठेकेदारों से पेड़ काटे जाने से बचाने के लिए महिलायें पेड़ों से चिपक जाती थी। यह पहला आन्दोलन था जो पर्यावरण बचाने के लिये ग्रामीण महिलाओं की सहभागिता से सम्पन्न हुआ। चिपको आन्दोलन से महिलाओं के जुड़ाव को इस तरह प्रचारित किया गया कि महिलायें पर्यावरण के क्षरण से तो सीधे तौर पर प्रभावित होती है और उनके विनाश का असर उनकी दैनिक दिनचर्या पर स्पष्ट रुप से परिलक्षित होता है। जगलों के नष्ट होने का स्वाभाविक परिणाम यह है कि महिलाओ को पानी, ईधन, लकड़ी और चारा बनाने के लिए अनथक परिश्रम करती है। जंगलों का विनाश उन्हें प्रतिदिन मीलों की यात्रा करने के लिए बाध्य करता है। चिपको आन्दोलन के संदर्भ में शोभिता जैन कहती है-पुरुष जो ग्राम पंचायत और अन्य ग्राम्य संगठनों में बैठते है और जो अपने परिवारों के मुखिया है वे सरकारी अफसरों को काफी सम्मान

देते है और उनसे डरते हैं। इसके विपरीत, स्त्रियाँ जिनका सरकारी अफसरों या अन्य बाहरी लोगों से कभी कोई सम्पर्क नहीं हुआ होता है वे केवल यह जानती है कि पेड़ों का काटना उनकी सुखद-समृद्धि के लिए नुकसानदायक है और वे अपनी धारणाओं के आधार पर सामान्य रुप में कार्य करती है।[9] साठ के दशक और सत्तर के दशक के आरम्भ में देश में एक नया राजनीतिक दौर आया जिसमें विभिन्न आन्दोलनों की उत्पत्ति हुई जैसे- नक्सलपंथी आंदोलन, जे0पी0 आन्दोलन, मूल्य वृद्धि विरोधी आन्दोलन। महाराष्ट्र के मूल्य वृद्धि आन्दोलन में शहरी क्षेत्रों की कम्युनिटी और सोशलिस्ट महिलाओं ने भाग लिया। बिहार में जे0पी0 के सशस्त्र क्रान्ति के आह्वान आन्दोलन में मध्यम वर्ग की स्त्रियों ने सशक्त भूमिका निभाई। यह आन्दोलन इस तथ्य को साबित करता था कि एक आम व्यक्ति भी अपने संघर्षो को राष्ट्रव्यापी स्तर पर ले जाकर आम आदमी की आवाज बन सकता है। लेकिन साथ ही यह तथ्य भी स्पष्ट है कि इन आन्दोलनों में महिलाओ की उपस्थिति एवं सहभागिता के महत्व को पूर्णतया रेखांकित नहीं किया गया है। महिला आन्दोलन की एक और धारा को स्वायत्त महिला दलों का आन्दोलन कहा गया है। इन आन्दोलनों का प्रसार सत्तर के दशक में शहरी क्षेत्रों में ऐसे महिला आन्दोलन थे जो माओवादी व नक्सलपंथी आन्दोलन से प्रभावित था। नक्सलवाद के पतन के पश्चात् महिलाओं ने अपनी भूमिका को परिवर्तित कर राजनीतिक रुप से सक्रियता बढ़ाई जैसे हैदराबाद में उस्मानिया यूनिवर्सिटी का प्रगतिशील महिला संगठन; 1974-1975 का मुंबई का स्त्री मुक्ति संगठन। 1980 के दशक में दहेज के खिलाफ अभियान प्रमुखतया उभरा। दहेज सम्बन्धी उत्पीड़न और उससे जनित मृत्यु का प्रश्न 1979 में बड़े पैमाने पर उठाया गया। इस दिशा में रैलियों और सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इन आन्दोलनों ने कानूनी सुधारों की मांग की। दहेज पाबंदी एक्ट; 1961 को संशोधित करने का बिल संसद की संयुक्त विशेष समिति को भेजा गया। इस समिति ने सारे देश का दौरा किया और 1981 तथा 1982 के दौरान विभिन्न महिला संगठनों और कार्यकर्ताओं ने इसके सामने अपने बयान पेश किये। 1984 में दहेज अपराधियो को दण्ड देने का कानून पास किया गया। लेकिन इसके बाद आन्दोलन ढ़ीला पड़ने लगा। फलस्वरुप यह भावना फैलने लगी कि इन उपलéधियों का कोई विशेष महत्व नहीं था क्योंकि दहेज की प्रथा बरकरार रही और अपराधियों को सजा देना कोई आसान काम नहीं था। अभियान का एक और महत्वपूर्ण मुद्दा बलात्कार का था, खासकर पुलिस द्वारा बलात्कार। कई घटनाओं ने इस प्रश्न पर जनता का ध्यान केन्द्रित किया, जैसे- हैदराबाद में 1978 का रमीजा बी का मामला, महाराष्ट्र में मथुरा का मामला और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में 1978 का माया त्यागी का मामला। महिला संगठनों एवं दलों ने प्रमुख राजनीतिक पर्टियों के साथ मिलकर इस सवाल को बड़े पैमाने पर उठाया और 1980 में ही बलात्कार संबंधी वर्तमान कानून को संशोधित करने के लिये बिल पेश किया गया। 1983 में इसे पास किया गया। इसमें नई बात यह थी कि पुलिस हिरासत में बलात्कार को अधिक जघन्य अपराध माना गया। इस बीच अभियान धीमा पड़ने लगा। इसका कारण महिला आन्दोलन में दिन-प्रतिदिन रणनीति एवं विचारधारा से संबंधित प्रश्नों पर तीखे मतभेद थे।[10] इसके बाद राजस्थान में सती के खिलाफ आन्दोलन शुरु हुआ। देवराला नामक स्थान पर रुपकंवर नामक युवती अपने पति की मृत्यु होने पर उसके साथ सती हो गयी। हिन्दुओं के परम्परागत संगठनों ने सती प्रथा को उचित ठहराते हुए इसे भारतीय परंपरा पर प्रहार बताया कि सती प्रथा को हत्या माना जाये। स्वामी अग्निवेश जो आर्य समाजी थे, ने राजस्थान और हरियाणा के ग्रामीण इलाकों में दौरा कर सती प्रथा के विरुद्व जनमत को जागरुक किया। उडीसा में गाँधीवादियों ने 10 हजार महिलाओं की रैली आयोजित की। महाराष्ट्र के जातिवाद विरोधी आन्दोलन और राजस्थान में ग्रामीण महिलाओं ने भी सती-प्रथा का विरोध किया। पिछले तीन दशकों में स्त्रियों को प्रत्यक्ष रुप से प्रभावित करने वाले मुद्दों पर स्त्रियों के स्वायत्त समूहों के द्वारा अनेक छोटे-बड़े आन्दोलन हुए है जैसे- बलात्कार, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न, पारिवारिक तथा घरेलू हिंसा। वर्तमान समय में जों प्रवृत्ति सबसे ज्यादा उभार ले रही है वह है महिलाओं के खिलाफ हिंसा और बलात्कार की घटनाओं में अप्रत्याशित वृद्धि। इस हिंसा ने हर वर्ग,

आयु की स्त्री को असुरक्षित कर दिया है। नर्मदा बचाओं आंदोलन एक गैर सरकारी संगठन है जिसने आदिवासी लोगों, आदिवासियों, किसानों, पर्यावरणविदों और मानव अधिकार कार्यकर्ताओं को सरदार सरोवर बाँध जो नर्मदा नदी, गुजरात में बनाया जा रहा था के खिलाफ आंदोलन करने के लिए बाध्य किया। मेधा पाटेकर ने 1985 में अपने सहयोगियों के साथ परियोजना स्थल का दौरा किया। इस बाँध के निर्माण के कारण पारिस्थितिकीय पर्यावरण को बड़े पैमाने पर नुकसान पहुँचने वाला था जिसे नजरन्दाज किया। स्थानीय लोगों की शिकायत थी कि पर्यावरण के क्षरण के साथ उनके पुनर्वास व विस्थापन जैसे मुद्दों को भी दरकिनार किया गया। परियोजना अधिकार इन सवालों के जबाव में अनुत्तरित थे। मेधा पाटेकर ने सरदार सरोवर बाँध के विरुद्व आन्दोलन के लिए मध्य प्रदेश से लेकर पड़ोसी राज्यों तक इस परियोजना के विरुद्व जनमत को जागृत किया। 1989 में मेधा पाटेकर द्वारा प्रारम्भ किये गये नर्मदा बचाओं आंदोलन में पर्यावरणविद्, मानवाधिकार कार्यकर्ता, शिक्षाविद् व परियोजना प्रभावित समूह शामिल हुए। उन्होंने 1993 में भी सत्याग्रह किया तथा बाँध स्थल से निकासी का विरोध किया। 1994 में नर्मदा बचाओं आंदोलन के कार्यालय में कुछ राजनीतिक दलों के द्वारा हमला किया गया। विभिन्न विचारकों द्वारा पर्यावरणीय आंदोलन की प्रासंगिकता पर प्रश्न उठाते हुये यह कहा गया कि स्थानीय लोगों द्वारा अपनी जीविका व रोजमर्रा की दिनचर्या से संबंधित मुद्दों पर कि गये प्रतिरोध को पर्यावरणीयता से जोड़ दिया गया। नये भारत के नये दौर में महिलाओं के लिए सबसे बड़ी चुनौती है उनकी सुरक्षा। भारत जैसे-जैसे साल दर साल प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है, महिलाओं के प्रति अपराध भी बढ़ते जा रहे है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड व्यूरो की एक रिपोर्ट के अनुसार हर दो मिनट में किसी न किसी महिला के साथ भारत में अपराध होता है। पिछले दो दशकों में महिलाओं पर एसिड अटैक, दहेज हत्या, कार्यस्थल पर उत्पीड़न, छेडछाड़ जैसी घटनायें बड़े शहरों में काफी बढ़ गई है। तकनीकी प्रगति ने महिलाओं की असुरक्षा को बढ़ा दिया है। महिलाओं के खिलाफ हिंसा खासकर बलात्कार की घटनाओं में अप्रत्याशित बढ़ोत्तरी हुई है। दिल्ली मे हुए निर्भया काण्ड; 2012 ने सारे देश को झकझोर दिया और सारे देश में एक नया रुख देखने को मिला, तो इसकी वजह थी सोशल मीडिया। सारे देश में जगह-जगह शांति मार्च हुए, प्रदर्शन किये गये, मौन जुलूस निकाले गये और इसके केन्द्र बिन्दु में था सोशल मीडिया। निर्भया बलात्कार मामले के बाद व्हाट्सएप उपयोगकर्ताओं ने अपने डिस्प्ले चित्रों को एक सफेद पृमठभूमि पर काले बिन्दु की छवि में बदलना शुरु किया। डॉट ने समाज पर एक ēलाट की प्रतीक का तात्पर्य था कि यह सामूहिक शर्म की बात है और सांस्कृतिक तौर पर धēबा है कि महिलायें सुरक्षित है। 21वीं सदी में आंदोलनों के स्वरुप ने तकनीकी रुप धारण कर लिया है। बंद कमरे के अंदर, अपने मोबाईल के माध्यम से भी लोग आंदोलनकर्ता की भूमिका निभा रहे है। विदेशों के इतर, भारत में स्त्री आंदोलन कोई स्पष्ट रुप लेता नहीं दिख रहा है। बहुत महिला संगठन स्थानीय प्रादेशिक स्तर पर बन गये है और वे पृथक-पृथक भूमिकाओं को निभा रहे है। नीरा देसाई और विभूति पटेल ने इन संगठनों को निम्न प्रकारों मे विभाजित किया है रूढ़ आदोलनपरक प्रचार और चेतना उत्पन्न करने वाले समूह जिन्हे स्वतंत्र समूह कहा जा सकता है। आधारभूत या जन आधारित संगठन जैसे- श्रमिक संगठन, खेतिहर श्रमिक संगठन लोकतांत्रिक अधिकार समूह, जनजातीय संगठन जो स्त्रियों के मुद्दों को उठाते है। ऐसे समूह जो जरुरतमंद स्त्रियों को सरंक्षण, घर सेवायें प्रदान करते है। व्यावसायिक स्त्रियों के संगठन जैसे- चिकित्सकों, विज्ञानियों, वकीलों, शोधकर्ताओं और पत्रकारों के संगठन। राजनैतिक दलों के महिला प्रकोष्ठ। ऐसे समूह जो स्त्रियों के मुद्दों के शोध और प्रलेखन मे लगे है।[11] उपर्युक्त वर्गीकरण से स्पष्ट है कि आंदोलन की सार्वभौमिकता का तथ्य, विलीनता की श्रेणी में आ चुका है। प्रत्येक संगठन का उद्देश्य प्रचारात्मक ज्यादा हो चुका है, विचारात्मक श्रेणी भी धीरे- धीरे कम होती जा रही है। अपने इस उद्देश्य पूर्ति हेतु संगठन विभिन्न माध्यमों को अपनाते है जैसे मांगों के समर्थन में हस्ताक्षर अभियान, अखबारों मे लेख, शांति मार्च नुक्कड सभा आदि। वर्तमान समय में अनेक मुद्दे व समस्यायें है जो आंदोलन की दरकार रखते है उनमें से

सबसे महत्वपूर्ण है- नारी को समानता का अधिकार जो आज भी दिव्य स्वप्न बना हुआ है। कब यह मुद्दा आंदोलन का विषय बनेगा और वह आंदोलन कब सशक्त व सफल होकर महिलाओं को अपनी सम्मानजनक व निर्णायक स्थिति को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करेगा, यह ज्वलंत प्रश्न है।

सन्दर्भ:

1. हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2013
2. किश्वर मधु, स्त्री पर गांधी, इकॉनोमिक एवं पॉलिटिकल वीकली 20(40), अक्टूबर, 2005
3. लता सिंह, राष्ट्रीय आंदोलन में महिलायें, भूमिका के सवाल, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2013 अक्टूबर
4. वहीं
5. सेन इतिना, ए स्पेस विदिन द स्ट्रगल, वीमेंस पार्टीसिपेशन इन पीपल्स मूवमेंट्स, नई दिल्ली: पार्टी आफर वूमेन, 1990
6. मुखर्जी मृदुला, मानुषी में प्रकाशित सुशांता जैन के साथ इण्टरव्यू
7. सातथाना, इंदिरा मुंशी, ट्राइबल बूमैन इन द वर्टी रिवोल्ट, 1945-27 क्लास एण्ड जेण्डर इन द लेफ्ट पर्सपेक्टिव, इकॉनामिक एण्ड पॉलिअिकल वीकली, 21 (17) 26 अप्रैल, 1986
8. कानन, के०पी० ऑफ रुरल प्रोलेटेरियन स्ट्रगलस, मोबाइजेशन एण्ड ऑर्गेनाइजेशन ऑफ रुरल वर्कस इन साउथ वेस्ट इण्डिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 1988
9. जैन शोभिता, वीमेंस एण्ड पीपल्स इकोलॉजिकल मूवमेंट ए केस स्टडी ऑफ वीमेंस रोल इन द चिपको मूवमेंट इन उत्तर प्रदेश, इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली 19(41), अक्टूबर 13, 1984
10. चंद विपिन, मुखर्जी मृदुला, मुखर्जी आदित्य, आजादी के बाद का भारत, (1947-2007) हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2017 पृ० 659
11. देसाई, नीरा पटेल, विभूति, इंडियन वीमेन चेंज एण्ड चैलेज, पॉपुलर प्रकाशन, मुम्बई, 1985